भारतीय परिप्रेक्ष्य में लोकतंत्र और राजनीतिक दल

डॉ. भावना यादव
सहायक प्राध्यापक-राजनीति विज्ञान
शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

किसी भी देश में सफल लोकतंत्र के लिये राजनीतिक दलों का होना आवश्यक है। भारतीय लोकतंत्र में भी ाजनीतिक दलों का महत्वपूर्ण स्थान है। राजनीतिक दलों को 'लोकतंत्र का प्राण' कहा गया है। जनता के तिनिधियों का निर्वाचन राजनीतिक दलों के माध्यम से ही संभव है। भारत में बहुदलीय पद्धति अपनायी गयी है। ोकतंत्र में शासन जन प्रतिनिधियों अर्थात जनता द्वारा चयनित प्रतिनिधियों द्वारा होता है और यह चयन (निर्वाचन) ाजनैतिक दलों के माध्यम से होता है। प्रत्येक राजनीतिक दल के अपने-अपने कार्यक्रम होते हैं निर्वाचन के समय ो अपना घोषणा-पत्र भी जारी करते हैं। जिस दल को बहुमत मिलता है उसके नेतृत्व में ही सरकार का गठन होता ै। इसे सत्तारूढ़ दल कहा जाता है। सत्तारूढ़ दल के साथ-साथ विपक्षी दल की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। मैकाइवर के अनुसार "राजनीतिक दलों के अभाव में न तो उचित सिद्धांतों की संगति अभिव्यक्ति हो सकती है और न नीतियों का समुचित विकास ही और न नियंत्रित रूप से संसदीय चुनाव के वैधानिक उपायों और मान्य संस्थाओं का सहारा ही लिया जा सकता है जिसके द्वारा राजनीतिज्ञ अपनी शक्ति को बनाये रखने तथा प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं।" दल जन सामान्य को देश की प्रमुख समस्याओं और सार्वजनकि प्रश्नों के प्रति जागरूक करते हैं और समस्या समाधान के उपाय दल की विचारधारा के अनुसार जनता के बीच रखते हैं।

भारतीय संविधान में संसदीय शासन प्रणाली अपनाई गई है तथा इसके लिये बहुदलीय पद्धति को अपनाया गया है। भारत में चुनाव दलीय आधार पर लड़े जाते हैं। प्रत्येक दल की अपनी अलग विचारधारा तथा कार्यक्रम होते हैं। निर्वाचकों द्वारा प्रत्याशियों का चुनाव व्यक्तिगत गुण-दोष के अलावा दलीय आधारों पर भी किया जाता है। निश्चित ही कोई मतदाता प्रत्याशी का चुनाव करते समय दल की छवि को भी ध्यान में रखता है। राजनैतिक दल लोकतंत्र की आधारशिला हैं। बिना राजनैतिक दलों के हम लोकतंत्र की कल्पना भी नहीं कर सकते। लोकतंत्र को दलीय शासन भी कहा जाता है। राजनीतिक दल ही लोकतंत्रीय शासन को व्यावहारिक रूप प्रदान करते हैं। जनता के मस्तिष्क को राजनीतिक भोजन और राजनैतिक शिक्षा देना दलों का कार्य होता है साथ ही दल निरंकुश शासन से लोगों की रक्षा तो करते हैं, साथ ही शासन को बहुमत के अनुकूल बनाने का भी कार्य करते हैं। वास्तव में दल जनता और सरकार के बीच की कड़ी होते है। जो दोनों के मध्य सामंजस्य स्थापित करते है। भारत में स्वतंत्रता पूर्व दलों का गठन हुआ जिनका प्रारंभिक उद्देश्य स्वतंत्रता प्राप्ति था। कालांतर में वे राजनैतिक दलों में बदले जिनका उद्देश्य सुधारवादी था।

"स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े कर्मठ और दूरदर्शी नेताओं ने धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी व्यवस्था की स्थापना में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन सभी नेताओं ने भारतीय राजनीति को मूल्य आधारित नीतियों से दिशा देने का प्रयास

 ISSN 2395-

किया। स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों ने बिना किसी स्वार्थ के राष्ट्रवादी विचार के लिये कार्य किये। राजनै विचारधारा अलग-अलग होते हुए भी सभी राजनेताओं ने राष्ट्र के निर्माण में योगदान दिया और अपनी विचार के अनुसार समाजवादी, कम्यूनिस्ट और प्रजातांत्रिक राजनैतिक दलों के निर्माण में सहायता की।''[1]

समय के साथ राजनैतिक दलों का स्वरूप बदला और दलों ने अपने आधारभूत उद्देश्यों को, त्याग, को सत्ता प्राप्ति के संकुचित उद्देश्य तक सीमित कर दिया। ''ज्यों-ज्यों शिक्षा का स्तर बढ़ा उतने ही कम पढ़े-लि चालाक, चतुर, धूर्त लोग राजनैतिक दलों में शामिल हुये ताकि सत्ता के दरवाजे तक सरलता से पहुँचा जा सके क्यों राजसत्ता से धन, बल और जन सभी पर कब्जा आ जाता है। ऐसा सोचकर अवसरवादी लोगों ने राजनैतिक दलों व्यक्तिगत दल जैसा बना दिया। .... ऐसे गलत तरीकों से राजनैतिक दल गठित किये, जिससे तीनों प्रकार की स शोषकों के हाथ में आ जाये। शोषकों ने एक-दूसरे की मदद की। धन एवं शक्ति पाने के लिये जाति क्षेत्र और का सहारा तो लिया ही साथ-साथ ही अर्थतंत्र पर कब्जे के लिए जो गलत व्यवस्थायें हो सकती थीं सभी का सह लिया और अपने तरीके से अर्थतंत्र को नियंत्रित कर लिया। कर चोरी, तस्करी, रिश्वतखोरी, माफियागिरी और लूटपा जैसे गलत तरीकों का सहारा लेकर राजनैतिक दलों को बढ़ाया गया।.... इस तरह के राजनैतिक दलों ने सत्ता में पहुँ कर सामंती और शोषणकारी व्यवस्थाओं को खुला संरक्षण दिलाया।.... जहाँ भारतीय राजनैतिक दलों के कम विकसि समाज और अर्थतंत्र को मजबूती देने का काम करना था वहाँ इन दलों ने व्यक्ति केन्द्रित विकास को महत्व दिया अ सत्ता प्राप्ति तक सीमित हो गये।''[2]

राजनैतिक दलों की सत्ता प्राप्ति के राजनैतिक दांव पेचों में जनता उलझती गई और गुमराह होती गई। प्राचं काल से राजनीति नैतिकता पर आधारित विषय थी। जिसका उद्देश्य राज्य की स्थापना, संचालन और विकास थ वहीं राजनीति धीरे-धीरे मूल्य विहीन स्वार्थ और सत्ता प्राप्ति पर आधारित हो गई। राजनैतिक दल अप विचारधाराओं के प्रति उदासीन होकर शक्ति सत्ता तक केन्द्रित होते गये और जनता को न अपनी समस्याओं समाधान मिला न राजनैतिक जागरूकता। ''यदि राजनीतिक दलों के इतिहास को देखा जाये तो चित्र काफी निराशाजन उभरता है। इसका मुख्य कारण इन दलों की भीतरी कलह, टूटन व बिखराव रहा है और ज्यों-ज्यों समय व्यतीत हो गया, सिद्धांतों के स्थान पर व्यक्तियों के नाम प्रमुख हो गये जैसे कांग्रेस (इंदिरा), कांग्रेस (अर्स), जनतादल (बी आदि।''[3] यही कारण है कि हमारे देश में राजनैतिक दलों का निर्माण जिस गति से होता है उसी गति से से दल विचारधारा का विघटन और दल का संवर्धन होता है। नवगठित दल अपने विकास हेतु साम, दाम, दंड, भेद तरीक का उपयोग जनता के सामने ही करते हैं और चुनावों में जनता दलों की इन स्वार्थपरक नीतियों को दरकिनार क मतदान करती है। वास्तव में ''राजनीतिक दलों ने वैसे ही पिछले 55 सालों में उम्मीदवारों के चयन में मतदाता क कोई भूमिका नहीं रखी है। मतदाता को तो राजनीतिक दलों द्वारा चुने गये लोगों में से किसी एक को वोट देने क अधिकार भर है।''[4]

राजनीति विज्ञान विषयानुसार राजनैतिक दलों के निर्माण के कुछ उद्देश्य होते हैं जो विचारधारा प आधारित होते हैं जिनकी प्राप्ति हेतु दल कुछ सिद्धांतों को तय करता है। जिस हेतु दल को संगठित किया जाता दल के सदस्य प्रजातांत्रिक तरीकों से अनुशासनबद्ध होकर जन जागरण, जन आंदोलनों के माध्यम से संविधान क सीमाओं में जन समस्याओं का सकारात्मक निवारण कर राष्ट्र विकास हेतु प्रतिबद्ध होते हैं। इस हेतु दल चुनाव

समय चुनावी घोषणा पत्र बनाते हैं। परंतु "अनेक बार में घोषणा पत्र महज थोपे आश्वासन निकलते हैं क्योंकि जब कोई राजनीतिक दल सत्ता में आ जाता है तो वह अपने आश्वासन या वायदों को पूरा करने की या तो क्षमता में नहीं होता या परिवर्तन परिस्थितियों के कारण उन्हें पूरा करने योग्य नहीं मानता। राजीव गाँधी के प्रधानमंत्रित्व में बनी कांग्रेस सरकार के वित्त मंत्री मनमोहन सिंह के पार्टी के अपने चुनाव घोषणा पत्र में यह वायदा किया था कि सरकार छह माह के भीतर मंहगाई को कम कर देगी अन्यथा तयागपत्र देगी। जब ऐसा कुछ नहीं हुआ तो सरकार सदन में बगले झांकने लगी..... सच्चाई तो यह है कि ये घोषणा पत्र अनेक बार केवल कागजी वायदों के पुलंदे होते हैं जिन्हें जारी करने वाले दलों के प्रतिनिधि या प्रत्याशी तो क्या उनके कर्णधार भी कई बार अच्छी तरह नहीं समझ पाते। अनेक दलों के घोषणा पत्र एक दूसरे से मेल खाते हैं और उनमें बहुत सी बातें समान होती है। जनता भी जान गई है कि चुनावी वायदे चुनाव जीतने भर के लिये होते हैं, लागू करने के लिए नहीं और फलतः उनकी और कोई विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। वर्तमान परिस्थितियों में महज औपचारिक दस्तावेज मात्र है।"[5]

आज सभी दल धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी लोकतंत्र की बात करते है। समाज में समानता, शिक्षा, बेरोजगारी, स्वच्छता, भ्रष्टाचार, शोषण रहित समाज, सामाजिक न्याय जैसी बातों को अपनी विचारधारा में महत्वपूर्ण स्थान देते हैं, जोर-शोर से इनका प्रचार प्रसार भी करते हैं परंतु उनक कथनी और करनी में बहुत भेद होता है। वास्तव में प्रायः सभी दल अपने ही दल के सदस्यों के शोषण की नींव पर अपने दल के संगठन की स्थापना कर रहे हैं। लोकतांत्रिक समाज के लिये ऐसी मनोवृत्ति और दल धीरे-धीरे बड़ा खतरा बनते जा रहे हैं। संभवतः यही कारण है कि भारत में लोकतंत्र के गिरते स्तर के लिये जो प्रमुख कारण उत्तरदायी है, उनमें शायद दलों की आंतरिक गिरावट का सर्वोच्च स्थान होगा। जिसके कारण सार्वजनिक जीवन में बेईमानी, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद का बोलबाला तीव्रता से बढ़ रहा है।

1992 को म.प्र. विधान सभा में आयोजित एक संगोष्ठी में तत्कालीन विधानसभा अध्यक्ष प्रो. बृजमोहन मिश्र ने कहा था कि "आज जो गंभीर चिंतनीय स्थिति बनी है, खतरे के जो बादल संसदीय प्रजातंत्र पर मंडरा रहे हैं उसके लिये कोई एक दल नहीं हम सब जिम्मेदार हैं। सारे राजनीतिक दल और उसके नेता जिम्मेदार हैं।"[6] इसी गोष्ठी में संसद सदस्य श्री अटलबिहारी वाजपेई ने माना था कि "लोकतंत्र की आभा मिटती जा रही है लोकतंत्र उपहास का विषय बनता जा रहा है। मैं खुले तौर पर कहना चाहता हूँ कि मैं दो-चार सदस्यों की बात नहीं कर रहा हूँ मैं दलों की बात कर रहा हूँ।"[7] म.प्र. विधान सभा के तत्कालीन उपाध्यक्ष श्री श्रीनिवास तिवारी की राय थी "मेरी मान्यता है कि इन सबके लिये सबसे ज्यादा उत्तरदायित्व जिसका होना चाहिये वह है राजनीतिक दल। राजनैतिक दल में यह साहस होना चाहिये, वह ताकत होना चाहिये कि वह अपने सदस्य को किस तरह मर्यादा के अंदर बाँध सकते हैं। उसे बांधने का प्रयास करना चाहिये, उसमें सामर्थ्य होना चाहिये। लेकिन आज हम देखते हैं कि राजनीतिक दल अपने को सक्षम नहीं पा रहे हैं।"[8] द न्यू स्टेट्स ऑफ एशिया में माइकल ब्रेचर का निष्कर्ष है कि "राजनीतिक अस्थिरता लाने में राजनीतिक दलों का घटिया व्यवहार भी अपना योग देता है।"[9]

राजनैतिक दल अपना व्यवहार सत्ता प्राप्ति हेतु परिवर्तित करते रहते है। श्री अटल बिहारी वाजपेई ने एक लेख में माना है कि "राजनैतिक दलों का व्यवहार सत्ता पक्ष और विपक्ष में रहने पर एक जैसा नहीं रहता। उनकी भूमिका बदल जाती है, उनकी भाषा और स्वर भी बदल जाता है। ऐसा नहीं होना चाहिये। सत्ता पक्ष में रहकर एक दल विपक्ष से जो अपेक्षा रखता है, विपक्ष में जाकर उसकी धारणा और प्रवृत्ति वैसी ही रहनी चाहिये।"[10]

वास्तव में "लोकतंत्र के लिये राजनीतिक दल वही कार्य करते हैं जो शरीर के लिये फेफड़ा करता है। परंतु यदि फेफड़े रूपी दल खराब है तो शरीर रूपी सारा लोकतंत्र स्वतः ही खराब हो रहा है। जबकि राजनीतिक प्रजातंत्र में शिक्षा और जागरूकता का सधन है जिनके बिना लोकतंत्र की कल्पना संभव नहीं है कहा भी जाता है "दल नहीं तो लोकतंत्र नहीं।"[1] परंतु कोई भी दल दलीय प्रणाली के इस महत्व के प्रति गंभीर नहीं है। यही क है कि "16वीं लोकसभा के 33 प्रतिशत सांसदों के खिलाफ आपराधिक मामले थे "यह विश्लेषण नेशनल इलेक वॉच और एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स ने 2014 के लोकसभा चुनाव के लिए 543 में से जनप्रतिनिधियों के शपथ पत्रों के आधार पर जारी किया है। रिपोर्ट के मुताबिक 174 सांसदों पर आपराधिक मा 10 सांसदों के खिलाफ हत्या व 14 के खिलाफ हत्या के प्रयास के मामलों, 106 सांसदों पर आपराधिक गंभीर मा दर्ज हैं। इनमें भाजपा, कांग्रेस, एनसीपी, एलजेपी, आरजेडी, तृणमूल कांग्रसे, शिवसेना जैसे दलों के सांसद है।

17वीं लोकसभा के लिये चुनाव प्रक्रिया में छठे चरण की 59 सीटों पर 979 प्रत्याशी मैदान में है कि से "भाजपा के 48 प्रतिशत तो कांग्रेस के 44 प्रतिशत प्रत्याशी दागी है साथ ही 311 उम्मीदवार करोड़पति है। निश्चित तौर पर इन्ही प्रत्याशियों में से कुछ चयनित होकर लोकसभा में जनता का प्रतिनिधित्व करेंगे। यहाँ महत्व यह है कि चुनाव पूर्व नामांकन के समय ही प्रत्याशियों की सभी महत्वपूर्ण जानकारियाँ जनता के समक्ष आ जा है तब भी बड़े प्रतिष्ठित दल ऐसे दागी प्रत्याशियों को चुनाव में उतारने से संकोच नहीं करते, जो दलों की स के प्रति लालसा को बताता है। साथ ही लोकतंत्र में दलों की वास्तविक स्थिति को भी। यह सत्य है कि बि दलों के संसदीय लोकतंत्र संभव नही है। न ही दलों की आंतरिक गिरावट को रोकने के कोई भी प्रभावी उप है जब तक की दल के वरिष्ठ नेता दल को सत्ता प्राप्ति का माध्यम न मानकर दल को जनता और सरकार बीच की सुदृढ़ कड़ी के रूप में स्थापित करने हेतु कटिबद्ध नहीं होते। आज जनता की राजनैतिक सहभागिता राजनैतिक दलों की भूमिका क्रमशः गौण होती जा रही है। दलों की भूमिका मात्र सत्ता प्राप्ति तक सीमित रह है। भारत में लोकतंत्र की सफलता हेतु दलीय राजनीति के दलों की भूमिका, गठन, विचारधारा पर गहन मंथन आवश्यकता है ताकि मंथन से निकले सकारात्मक परिणामों का व्यवहारिक कार्यान्वयन कर दलों के महत्व की पुर्नस्था संभव हो सके।

श्री श्रीनिवास तिवारी पूर्व अध्यक्ष म.प्र. विधान सभा का मत है कि "राजनीतिक दलों को देश में संसदी लोकतंत्र की वर्तमान स्थिति और उसके भविष्य के बारे में विचार करने के लिये यह बहुत ही उपयुक्त समय है। उ यह स्वीकार करना होगा कि देश में संसदीय लोकतंत्र को समक्ष और समर्थ बनाना है तो उसकी जड़ों को सींच होगा। उन्हें यह भी नहीं मूलतः चाहिये कि जब तक हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था जीवंत और प्राणवान बनी रहेगी त तक हमारी स्वतंत्रतः और अखंडता भी सुनिश्चित रहेगी। इसलिये मेरी यह स्पष्ट मान्यता है कि देश में संसदीय लोक की वढ़ोत्तरी के लिये राजनैतिक दलों को आगे आना चाहिये और अपनी सार्थक भूमिका का निर्वाह करना चाहिये।"

वास्तव में लोकतंत्र के पिछले 70 वर्षों के अनुभवों को सामने रखकर राजनीतिक दलों की भूमिका विचार किया जाना चाहिये। जिसमें राजनीतिक दलों की आंतरिक गिरावट को समाप्त करने के उचित और सार्थ प्रयासों में राष्ट्रहित, व्यापक जनहित और लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना को समाहित कर दलों की भूमिका निर्धारण हो।

संदर्भ

1. डॉ. एस. आर. पॉल - राजनीतिक दल और जन-प्रतिनिधि कालेज बुक डिपो, जयपुर, पृ. 54।
2. डॉ. एस. आर. पॉल - राजनीतिक दल और जन-प्रतिनिधि कालेज बुक डिपो, जयपुर, पृ. 55।
3. आचार्य भालचंद्र गोस्वामी 'प्रखर' - भारत में चुनाव सुधार दशा और दिशा, पोइंटर पब्लिशर्स जयपुर, पृ. 54।
4. डॉ. निशांत सिंह स्वप्निल सारस्वत - लोकतंत्र और चुनाव सुधार राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ. 8।
5. आचार्य भालचंद्र गोस्वामी 'प्रखर' - भारत में चुनाव सुधार दशा और दिशा, पृ. 59-60।
6. विधायनी वर्ष 14 अंक 3 जुलाई-सितम्बर 1996, पृ. 16।
7. विधायनी वर्ष 14 अंक 3 जुलाई-सितम्बर 1996, पृ. 18।
8. विधायनी वर्ष 14 अंक 3 जुलाई-सितम्बर 1996, पृ. 23।
9. माइकल ब्रेचर - द न्यू स्टेट्स ऑफ एशिया 1963 आक्सफोर्ट लंदन, पृ. 66।
10. विधायनी वर्ष 14 अंक 3 जुलाई-सितम्बर 1996, पृ. 20।
11. वीरेन्द्र शुक्ल - नागरिक शास्त्र, भारतीय भवन पल 2007, पृ. 31।
12. वीरेन्द्र शुक्ल - नागरिक शास्त्र, भारतीय भवन पल 2007, पृ. 32।
13. पत्रिका, 29 मार्च 2019, पृ. 10।
14. पत्रिका, 05 मई 2019, पृ. 11।
15. विधायनी वर्ष 14 अंक 3 जुलाई-सितम्बर 1996, पृ. 37।